International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 78-80

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 78-80
www.allresearchjournal.com
Received: 01-11-2015
Accepted: 03-12-2015

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हिप्र

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हिप्र

सूरदास के काव्य में दर्शन

डॉ. शिवदत्त शर्मा

भारतीय दर्शन की लम्बी परम्परा है। भारतीय दर्शन ने विश्व दर्शन को प्रभावित किया है। भारतीय दर्शन का आधार वैदिक दर्शन को माना जाता है। भक्ति काल में भक्ति के प्रवाह में अनेक दर्शन दिखाई देते हैं। मूलतः जिन वैदिक दर्शन को दार्शनिक मानते हैं वे हैं अद्वैत दर्शन, विशिष्ट अद्वैत दर्शन द्वैताद्वैत दर्शन तथा शुद्धाद्वैत दर्शन। सूरदास के भ्रमर गीत में जिस दर्शन को स्वीकार किया है उसका नाम है शुद्धाद्वैत दर्शन। इस दार्शनिक सिद्धान्त के नाम में अद्वैत के साथ शुद्ध शब्द जुडा हुआ है। यह शंकराचार्य के अद्वैत दर्शन से नितान्त भिन्न है। शंकराचार्य ने ब्रह्म को अद्वैत माना है तथा माया को मिथ्या कहा है। रामानुजाचार्य ने अद्वैत ब्रह्म को चिन्मय आत्मा और जड प्रकृति से विशिष्ट बतलाया हैं। स्वामी वल्लभाचार्य ने उपर्युक्त आचार्यों के मतों के विरुद्ध, ब्रह्म के शुद्ध स्वरूप का प्रतिपादन किया। इस लिए उनका सिद्धान्त शुद्धाद्वैत कहलाता हैं। दूसरे आचार्यों के दार्शनिक सिद्धान्त वेद, गीता और व्रह्मसूत्र आदि पर ही आधारित हैं परन्तु वल्लभाचार्य ने उन तीनों के साथ श्रीमद् भागवत् को भी सम्मिलित कर दिया। 1

शंकराचार्य के अनुसार अद्वैत सिद्धान्त का सार है– ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या,जीवो ब्रह्मैव नापरः। अर्थात् ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है और जीव ब्रह्म से भिन्न नहीं है। 2 इसके विपरीत स्वामी वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुए कहा है कि–ब्रह्म सत्यं जगत सत्यं अंश जीवो हि नापरः। अर्थात् ब्रह्म सत्य है जीव भी सत्य है और जीव ब्रह्म का अंश है। वह पूर्ण ब्रह्म नहीं है। शुद्धाद्वैत सिद्धान्त का उपजीव्य ग्रंथ बादरायण व्यास रचित ब्रह्म सूत्र है।, जिसका भाष्य वल्लभाचार्य ने लिखा। इसका नाम है अणु भाष्य। 3

वल्लभ सम्प्रदाय का प्रवर्तन वल्लभचार्य ने शुद्धाद्वैत वादी चिन्तन से प्रभावित होकर किया। इसके व्यावहारिक पक्ष को पुष्टि मार्ग कहा गया है। पुष्टि से अभिप्राय है पोषण अर्थात् भगवान का अनुग्रह या उनकी कृपा ही पोषण है। स्पष्ट है पुष्टि का भाव है भगवान की कृपा।

वल्लभ सम्प्रदाय के तीन मार्ग हैं– मर्यादामार्ग, प्रवाक मार्ग, तथा पुष्टि मार्ग। इनमें पुष्टि मार्ग को सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। पुष्टिमार्गीय भक्ति को ही रागानुगाभक्ति भी कहते हैं जिसमें किसी प्रकार के कर्मकाण्ड अथवा साधन की आवश्यकता नहीं होती। ऐसा माना जाता है कि जो व्यक्ति पुष्टि मार्ग को ग्रहण कर लेता है, उसके भाग्य तथा संचित कर्मों का शमन ईश्वर कृपा से स्वतः हो जाता है तथा इसके लिए उसे किसी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती। सूरदास के दीक्षागुरु वल्लभाचार्य थे। उनके दिशा निर्देश के अनुसार सूरदास ने माधुर्य भक्ति का गान किया। पुष्टि मार्ग के आधार पर कृष्ण के रूपसौन्दर्य का इन्होंने वर्णन किया।सूरदास के विचार स्पष्ट हैं तथा शुद्धाद्वैत सिद्धान्तों से पूरी तरह मेल खाते हैं। 4

1 ब्रह्म निरूपण और शुद्धाद्वैत वाद–

अन्य दार्शनिक सि़द्धान्तों की भान्ति शुद्धाद्वैत में भी ब्रह्म को सर्वोपरि तत्व माना गया है। उपनिषदों में ब्रह्म् की विस्तृत चर्चा की गई हैं। बादरायण व्यास द्वारा रचित ब्रह्मसूत्र में भी इस पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। ब्रह्मसूत्र के एक सूत्र में स्पष्ट उल्लेख है–

अथातो ब्रह्म जिज्ञासा। अर्थात् इसमें ब्रह्म के स्वरूप को जानने की जिज्ञासा व्यक्त की गई है। ब्रह्मसूत्र ग्रंथ सूत्र शैली में रचित हैं। इस पर परवर्ती धर्माचायों ने अनेक भाष्य लिखे हैं। स्वामी वल्लभाचार्य का ब्रह्मसूत्र पर अणुभाष्य के नाम से प्रसिद्ध है।वल्लभाचार्य के अनुसार–परब्रह्म जहां प्रकृति जन्य धर्मों के अभाव में निर्गुण है, वहां आनन्ददायक दिव्य धर्मों से युक्त होने के कारण सगुण भी है। प्राकृत आकार रहित होने से निराकार है, तो आनन्ददायक अवयवों से सम्पन्न होने के कारण साकार भी हैं। 5

यद्यपि सूरदास वललभाचार्य के शिष्य होने के कारण परब्रह्म के दोनों रूपों निर्गुण और सगुण अथवा निराकार और साकार सभी रूपों को स्वीकार करते हैं परन्तु सूरसागर में कवि ने सगुण–साकार रूप

का ही अधिक वर्णन किया है। निराकार अथवा निर्गुण ब्रह्म अविगत होने के कारण अवर्णनीय है। वह मन और वाणी क लिए अगम तथा अगोचर है। अतः उसे कोई बिरला ही पा सकता है। वे कहते हैं–

अविगत–गति कछु कहत न आवै।
ज्यों गूंगे मीठे फल को रस, अंतरगत ही भावै।।
परम स्वाद सबही सु निरंतर, अमित तोष उपजावै।
मन वानी को अगम अगोचर, सो जाने जो पावै।।
रूपरेखगुनजाति जुगति बिनु, निरालम्ब कित धावै।
सब विधि अगम विचारहि, तातै सूर सगुन लीला पद गावै।।

परब्रह्म के तीन मुख्य धर्म हैं– सत्, चित् तथा आनन्द। इसी लिए उसे सच्चिदानन्द कहते हैं।शुद्धाद्वैत सिद्धान्त में परब्रह्म को कृष्ण कहा गया है। 6
परब्रह्म तु कृष्णेहि सच्चिदानन्दकं बृहद्। सूरदास ने भी एक स्थल पर ऐसे ही विचार व्यक्त किए हैं–

आदि सनातन हरि अविनासी। सदा निरन्तर घट–घट वासी।।
पूरन ब्रह्म पुरान बखानैं। चतुरानन सिव अंत न जानै।।
गुनगन अगम निगम नहिं पावै, ताहि जसोदा गोद खिलावै।।
जप तप संजम ध्यान न आवै। सोई नंद के आंगन धावै।।

शुद्धाद्वैत वाद के अनुसार ही परब्रह्म श्री कृष्ण को सभी धर्मों का आश्रय माना है। सूरदास का एक पद देखिए–

जाके उदर लोक–त्रय, जल–थल पंच तत्व चौरवानि।
सें बालक झूलत ब्रज पलना, जसुमत–भवन हिं आनि।।

तथा– दयानिधि, तेरी गति लखि न परै।
सूरदास के कृष्ण मूल रूप में निर्गुण ही हैं किन्तु भक्तों के आनन्द के लिए अवतार लेते हैं–

को माता को पिता हमारे।

कब जनमत हमकों तुम देख्यौ, हंसी लगति सुनि बात हमारे।

पिता मात इनके नहिं कोई।
आपहु करता, आपहि हरता, निर्गुण गए ते रहत है जोई

इस सिद्धान्त के अनुसार परब्रह्म कृष्ण में अनन्त शक्तियां हैं। ये विविध रूप धारण कर श्री कृष्ण के साथ विलास करती हैं। श्रीस्वामिनी, राधा यमुना आदि नाम रूपों में प्रकट होकर श्रीकृष्ण के साथ निरन्तर लीलाएं करतीं रहतीं हैं। सूरसागर में इसी तरह अनेक पद हैं। सूरदास ने ब्रह्म संबन्धी सम्पूर्ण विवेचना शुद्धाद्वैत के सिद्धातों के अनुसार है। अनेकस्थलों पर ब्रह्म के दोनों रूपों का वर्णन करते हुए सूरदास दिखाई देते हैं। गोपियां जिस कृष्ण की विरह से व्याकुल दिखाई देतीं हैं, वह ब्रह्म का सगुण रूप है।

2 जगत सम्बन्धी विवेचन–

शुद्धाद्वैत सिद्धान्त के अनुसार यह जो जगत है पारब्रह्म का ही भौतिक रूप है। छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार–सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति। बिल्कुल स्वामी वल्लभाचार्य के ही अनुकूल है। श्री शंकराचार्य के अनुसार ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या है परन्तु वल्लभाचार्य के अनुसार ब्रह्म सत्यं जगत् सत्यं, मिथ्या संसार केवलम्। वल्लभाचार्य के अनुसार जगत् और संसार में अन्तर है दोनों भिन्न भिन्न तत्व हैं। शुद्धाद्वैत के अनुसार जगत् ब्रह्म रूप होने के कारण ब्रह्म की भान्ति सत्य है, परन्तु संसार तो माया ग्रस्त होने के कारण मिथ्या है। 7 सूरसागर में जगत और संसार का वर्णन कई पदों में मिलता है। उदाहरण देखिए–

क जगत–
कृष्ण भक्ति करि कृष्णहि पावै।
कृष्णहिं तैं यह जगत प्रगट है हरि में लय ह्वै जावै।

ख संसार–
अरे मन मूरख,जनम गंवायौ।
यह संसार सुवा सेंमर जयों, सुंदर देखि लुभायौ।
चाखन लाग्यो रुई उडि गई, हाथ कछू नहिं आयौ।

3 जीव विषयक विचार–

शुद्धाद्वैत वाद के अनुसार जिस प्रकार ब्रह्म की रमण करने की इच्छा से जगत् का आविर्भाव होता है, उसी प्रकार उससे जीव पैदा होते हैं। इस तरह मूल रूप में जीव भी ब्रह्म से भिन्न नहीं है। उदाहरण स्वरूप जिस तरह एक ही सूर्य भिन्न भिन्न पात्रों में दिखाई देता है उसी प्रकार ब्रह्म भी विभिन्न जीवों में है। ब्रह्म अंशी है और जीव उसका अंश तथा सेवक है। अन्तर इतना है कि ब्रह्म की शक्ति अनन्त है और जीव की शक्ति सीमित है। स्वामी वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत सिद्धान्त के अनुसार जीव का वर्णन किया है। सूरदास ने अपने दीक्षा गुरु वल्लभाचार्य के समान जीव सृष्टि का सैद्धान्तिक वर्णन नहीं किया है और न ही उनका यह उद्देश्य ही था। सूरदास ने जीवों को संसारी तथा मायाग्रस्त माना है। 8 परन्तु कवि का विचार है कि ईश्वर की कृपा से, भक्ति से जीव मुक्त अवस्था को प्राप्त कर सकता है। उदाहरण देखिए–

जौं लौं सतसरूप नहिं सूझत।
तौं लौं मृगमद नाभि बिसारै, फिरत सकल बन बूझत।
अपनौ ही मुख मलिन मंदमति,देखत दर्पन मांही।
ता कालिमा मेटिवे कारन, पचत पखारत छांही।

4 माया विषयक विचार–

शुद्धाद्वैत वाद के अनुसार ब्रह्म का माया के साथ वैसा ही सम्बन्ध है जैसा सूर्य का प्रकाश से है। माया ब्रह्म की सामर्थ्य शक्ति है। माया भी दो प्रकार की बताई गई है। विद्या माया और अविद्या माया। विद्या माया के कारण ब्रह्म रूप श्री हरि संसार की उत्पत्ति, उसका पालन, और संहार करते हैं तथा अविद्या माया संसार के जीवों को भ्रमित करती है। जिन प्राणियों पर भगवान का अनुग्रह हो जाता है, वे माया के जाल से मुक्त हो जाते हैं। 9 सूरदास ने माया का बडा विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। उन्होंने माया को मोहित करने वाली शक्ति कहा है। वे स्वयं भी उससे भयभीत हैं। उनका कथन है कि हे हरि तुम्हारी माया बडी प्रबल है। यह जीव के मन में भ्रम पैदा कर देती है। इस अवस्था में मैं तुम्हारा स्मरण कैसे करूं! यह माया तो लकुटी हाथ में सेकर जीव को अनेक प्रकार से नचाने में समर्थ है।

क्हरि, तेरो भजन कियो न जाइ।
कहा करो, तेरी प्रबल माया देती मन भरमाइ।।
खविनती सेनो दीन की चित दे, कैसे तुव गुन गावै।
मया नटी लकुटि कर लीन्हें, कोटिक नाच नचावै।
गहरि, तुम माया को न विगोयो।
नारद मग्न भये माया में, ज्ञान–बुद्धि बल खोयो।।

कुछ आलोचकों का मानना है कि इन पदों में श्री शंकराचार्य का प्रभाव दिखाई देता है। सम्भव है कि इन पदों की रचना पुष्टि मार्ग में दीक्षा लेने से पहले की हो। वल्लभाचार्य ने अविद्या माया को भगवान के चरणों की दासी कहा है। उनके अनुसार भगवद्भक्तों का यह माया कुछ नहीं बिगाड सकती। सूरदास ने स्वामी वल्लभाचार्य से दीक्षा लेने के बाद श्री नाथ के मन्दिर में कीर्तन करते हुए नृत्य रूपक का निम्न लिखित पद इस प्रकार गाया था–

अब मैं नाच्यौ बहुत गोपाल।
माया कौ कटि फेंटा बांध्यौ, लोभ तिलक दियो भाल।।
कोटिक कला काछि दिखराई जलथल सुधि नहीं काल।
सूरदास की सबै अविद्या दूरि करौ नंदलाल।।

ऐसा माना जाता है कि इस समय सूरदास को वल्लभाचार्य ने कहा था कि अब तुम्हारे मन में कछु अविद्या नहीं रही। इस तरह स्पष्ट है कि कविवर सूरदास की रचनाओं में शुद्धाद्वैतवाद के सि़द्धान्तों का यथासम्भव पालन हुआ है। इस तथ्य की पुष्टि प्रभुदयाल शीतल के इन शब्दों से भी होती है–
सूरदास तत्वतः दार्शनिक नहीं थे। वे परम भक्त, आशु कवि और रससिद्ध गायक थे। उनका उद्देश्य दार्शनिक उहापोह करना नहीं था, वरन् भक्ति–भावपूर्ण सरस काव्य की रचनाकर उसे तल्लीनतापूर्वक गाना थां। वे श्री वल्लभाचार्य जी के दीक्षा प्राप्त शिष्य होने के कारण उनके दार्शनिक सिद्धान्त शुद्धाद्वैतवाद के अनुयायी थे। उन्होंने भी आचार्य जी से पुष्टि मार्गीय उपासना भक्ति और सेवा–तत्व को भी ग्रहण किया। उनकी रचनाओं में इन सबके अनुकूल कथन मिलता है, किन्तु सूरसागर के अनेक पद भी उनकी दार्शनिक एवं आध्यात्मिक अनुभूति से ओतप्रोत हैं।

सन्दर्भ सूचि–

1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भ्रमर गीत सार पृ 67
2 बलदेव उपाध्याय भारतीय दर्शन पृ 174
3 उपरोक्त पृ 123
4 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भ्रमर गीत सार पृ 97
5 बलदेव उपाध्याय भारतीय दर्शन पृ 234
6 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भ्रमर गीत सार पृ 127
7 बलदेव उपाध्याय भारतीय दर्शन पृ 118
8 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भ्रमर गीत सार पृ 76
9 बलदेव उपाध्याय भारतीय दर्शन पृ 243